इकाई 7 मध्य एशिया और ईरान के साथ संबंध

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

इस इकाई में मुगलों, ईरानियों तथा उजबेगों के मध्य सोलहवीं तथा सत्रहवीं शताब्दियों के दौरान विकसित हुए त्रिपक्षीय संबंधों की विवेचना की गई है। इस इकाई से आपको निम्नलिखित की जानकारी होगी :

- उत्तर-पश्चिम सीमा के भौगोलिक महत्व की,
- उस विश्व एवं क्षेत्रीय दृष्टिकोण की जिसने त्रिपक्षीय संबंधों को एक स्वरूप दिया एवं सुनिश्चित किया,
- मुगल उजबेग संबंधों के मुख्य चरणों की, और
- मुगल तथा सफवी संबंधों के विभिन्न चरणों की।

7.1 प्रस्तावना

हिमालय पर्वत, भारतीय समुद्र,अरब सागर तथा बंगाल की खाड़ी द्वारा घेरे-बंदी से भारत की तीन दिशाओं से प्राकृतिक सुरक्षा होने के साथ-साथ उत्तर-पश्चिमी सीमाओं की ओर से असुरक्षित होने के कारण इस दिशा से लगातार भारत को बाहय खतरों का सामना करना पड़ता था। हिन्दूकुश पर्वतों के पार के क्षेत्रों में ईरान, काबुल एवं ट्रांसऑक्सियाना स्थित थे। इसी मार्ग से होकर यूनानी, हूण, तुर्क, मुगल तथा अन्य आक्रमणकारी कुछ अंतराल के बाद लगातार आते रहे। अपनी सत्ता को स्थापित करने के बाद मुगलों ने अपनी उत्तर-पश्चिमी सीमा की सुरक्षा के प्रति काफी गंभीरता से ध्यान दिया। अकबर ने

अपने सैनिक अभियानों का संचालन अपने साम्राज्य को मजबूत एवं सुदृढ़ करने के लिए भारत की सीमाओं के अंदर ही किया और वह हिन्दूकुश या होरमुज की सीमाओं से बाहर न गया। अपने शासन के प्रारंभ से ही अकबर काबुल एवं कंधार को इस कारण से अपने अधीन करना चाहता था जिससे कि किसी भी बाह्य आक्रमण के विरुद्ध वह ढाल का काम करे। अबुल फजल ने इस वास्तविकता पर बल दिया कि काबुल एवं कंधार दोनों भारत के दोहरे प्रवेश द्वार थे। एक ईरान को तो दूसरा मध्य एशिया की ओर जाता था। इससे पूर्व बाबर ने भी इस वास्तविकता का विवरण अपनी पुस्तक **बाबरनामा** में किया था। बाद के सुजान राय भंडारी जैसे इतिहासकारों ने भी इसी प्रकार के विचार व्यक्त किये। जहां एक ओर अकबर तथा उसके पूर्ववर्ती शासकों को अपनी मातृभूमि से अथाह प्रेम था वहीं उसके उत्तराधिकारी बिना किसी सोच-विचार के साम्राज्यवादी अभिलाषा को पूरा करने में उलझ गए तथा इस नीति के कारण शाहजहां के अधीन भेजे गए उत्तर-पश्चिमी सैनिक अभियान के कारण मुगल साम्राज्य को भारी मूल्य चुकाना पड़ा। ईरान तथा मध्य एशिया के साथ मुगलों के संबंधों को जहां एक आंतरिक राजनैतिक घटनाक्रम ने सुनिश्चित किया वहीं उनको उनकी अपनी त्रिपक्षीय आवश्यकताओं, विश्व तथा क्षेत्रीय अवधारणाओं एवं मान्यताओं ने भी प्रभावित किया।

7.2 विश्व एवं क्षेत्रीय अवधारणा

16वीं सदी के प्रथम दशक में जैसे ही तैमूर एवं तुर्की राज्यों का पतन हुआ वैसे ही पश्चिम एशिया एवं मध्य एशिया में दो नये राज्य अस्तित्व में आये (खंड 1 की इकाई 1)। इन दोनों राज्यों (उजबेग तथा सफवी) की सीमायें परस्पर मिलती थी। केवल अमु दरिया दोनों को अलग करता था। इसी कारण दोनों के बीच कभी समाप्त न होने वाला संघर्ष एवं युद्ध स्वाभाविक था। यही कारण था कि उन दोनों की साम्राज्य प्रसार की योजनाओं को एक-दूसरे के क्षेत्र पर अधिकार करके ही पूरा किया जा सकता था। यद्यपि नये राज्य एक बड़े साम्राज्य के प्रांत रह चुके थे और इसी कारण से उनमें कुछ समान विशेषतायें भी थी। इन नये राज्यों के पतन के फलस्वरूप 16वीं सदी के प्रारंभ में दो अलग एवं विशिष्ट पहचान वाले राज्यों का उद्भव हुआ। अब इनका जातीय तथा भाषाई, आधार तथा काफी हद तक सामाजिक-सांस्कृतिक परंपराएं भी भिन्न थी। "सफवी" या "धर्म योद्धा" उनको कहा गया जिन्होंने अपने सह धर्मियों को एक राजनैतिक शक्ति के रूप में संगठित किया और उनके उद्भव से ईरानी राज्य की स्थापना ऑटोमन साम्राज्य तथा उजबेगों के एक प्रतिद्वन्द्वी के रूप में हुई। व्यापक स्तर पर हुए विस्थापन के कारण (स्वत: या जबरदस्ती) जनसंख्या के प्रारूप पर भी प्रभाव पड़ा। सफवियों के शिया ईरान राज्य से सुन्नी मुसलमानों का पलायन उजबेगों के सुन्नी ट्रांसऑक्सियाना को हुआ तथा शिया मुसलमानों का पलायन सुन्नी ट्रांसऑक्सियाना से शिया ईरान राज्य को हुआ।

इस क्षेत्र के तीनों राज्य अर्थात मध्य एशिया (ट्रांसऑक्सियाना), ऑटोमन टर्की एवं मुगल राज्य सुन्नी राज्य थे। इन तीनों राज्यों के बीच धर्म के आधार पर संबंधों में कटुता की संभावना न थी। जहां एक ओर उजबेग ऑटोमन जैसे अपने समकालीन साम्राज्य पर भरोसा रख सकते थे वहीं दूसरी ओर सफवियों के पास ऐसा कोई विश्वसनीय एवं स्थायी सहयोगी न था जिसके साथ समान धार्मिक विश्वास के आधार पर संबंध रखे जा सकते थे। धार्मिक मतभेदों के अलावा (जिनका राजनैतिक लक्ष्यों के लिए सोलहवीं शताब्दी में भरपूर उपयोग किया गया) ईरान के इन उपरोक्त राज्यों के साथ अन्य कई स्तरों पर मतभेद थे। भौगोलिक स्तर पर बहुत समीप होने के कारण उजबेगों का विस्तार ईरान राज्य की ओर ही संभव था और ईरान राज्य जहां एक ओर भौगोलिक तौर पर महत्वपूर्ण था वहीं वह व्यापारिक तौर पर संपन्न एवं उपजाऊ भी था। ऑटोमन साम्राज्य समुद्री व्यापार मार्गों पर अपना नियंत्रण बनाये रखने को उत्सुक था। क्योंकि इसके हितों की पूर्ति होर्मुज (एक विकसित बंदरगाह), लाल सागर तथा हिन्द महासागर पर नियंत्रण रखने में थी। इस कारण से न केवल ईरान के साथ संघर्ष संभावित था अपितु किसी समय पुर्तगालियों एवं रूसियों के साथ भी। हिन्द महासागर क्षेत्र में ऑटोमन साम्राज्य के लिए

पुर्तगाल लगातार एक खतरा बना हुआ था और इसी कारण ऑटोमन साम्राज्य पुर्तगालियों को समुद्र के क्षेत्र से बेदखल करना चाहता था। इसलिए ईरानियों एवं पुर्तगालियों के मध्य यदा-कदा होने वाली मित्रता कोई आश्चर्य की बात न थी।

ईरान की व्यापारिक एवं सामरिक महत्ता, इसके गलीचे एवं रेशम उद्योगों एवं इसकी भूमि की उर्वरकता ने सदैव ही इसके पड़ोसियों के लालच को और अधिक बढ़ाया। इस प्रकार ईरान को लगभग निरंतर रूप में कभी ऑटोमन एवं कभी उजबेगों के अभिलाषायुक्त तथा प्रसारवादी सैनिक अभियानों का सामना करना पड़ा। रूसी जारों की दृष्टि ट्रांसऑक्सियाना पर थी और उन्होंने न केवल कज्जाकों को उजबेगों पर आक्रमण करने के लिए उकसाया अपितु शिया ईरान के साथ मैत्रीपूर्ण संबंध कायम करने के लिए आग्रह किया। इस प्रकार ईरान को पुर्तगालियों, रूसियों तथा आगे चलकर अंग्रेजों का अस्थायी समर्थन प्राप्त हुआ। ऐसा इस कारण से हुआ क्योंकि ये सभी अपने-अपने हितों को देखते हुए अपने विरोधियों के विरुद्ध ईरान को एक संतुलन बनाए रखने वाले राज्य के रूप में उपयोग करना चाहते थे।

भारत के साथ कंधार के क्षेत्र को लेकर ईरान कड़ा प्रतिरोधी था जिसके कारण ईरान की भारत के साथ शत्रुता से लेकर सशस्त्र संघर्ष की स्थिति बनी रहती थी। इसके बावजूद भी जब कभी भी मुगलों ने ईरानियों से मदद मांगी उन्होंने हमेशा दी। शाह इस्माइल ने बाबर की सहायता उजबेगों के विरुद्ध की और हुमायूं के साम्राज्य को पुनः स्थापित करने में ईरान के शासक तहमस्प ने निर्णायक सहायता प्रदान की। शाह अब्बास ने अकबर तथा जहांगीर के साथ मित्रतापूर्वक संबंध बनाकर रखे और गोलकुण्डा, बीजापुर जैसे दक्खन के राज्यों को भी सहायता दी और उनके मामले की अकबर के सम्मुख वकालत की।

उजबेगों का मानना था कि मुगल एक महत्वपूर्ण संतुलन प्रदान करने वाली शक्ति थी यदि उनका थोड़ा भी झुकाव ईरान की ओर हो गया तब क्षेत्र की शांति एवं प्रगति में विघ्न उत्पन्न हो जाएगा। ऑटोमनों की उजबेगों से कोई दुश्मनी नहीं थी तथा ईरान के प्रश्न पर उनके समान हित उन्हें नजदीक ले आए यद्यपि मुगलों का ऑटोमनों के प्रति झुकाव नहीं था।

इस प्रकार शक्ति के दो गुटों के बीच पारस्परिक सौहार्द विद्यमान था अर्थात एक ओर ऑटोमन साम्राज्य एवं उजबेगों के मध्य सौहार्दपूर्ण संबंध थे तथा दूसरी ओर मुगलों एवं ईरानियों के बीच परंपरागत सहमति थी।

बोध प्रश्न 1

1) मुगलों की उत्तर-पश्चिमी सीमा नीति के संदर्भ में काबुल तथा कंधार के महत्व पर प्रकाश डालिये।

....

....

....

....

....

2) उन भौगोलिक कारणों को बताइये जिससे भारत, ईरान तथा ट्रांसऑक्सियाना के बीच त्रिपक्षीय संबंधों का निर्धारण हुआ।

....

....

....

....

....

3) उस विश्व स्थिति का विवेचन कीजिए जिसने मुगलों की मध्य एशिया एवं ईरान के प्रति नीति को प्रभावित किया।

....
....
....
....
....

7.3 उजबेगों के साथ संबंध

जैसा कि इकाई 1 में वर्णित किया गया है कि बाबर को मध्य एशिया से बाहर निकाल दिया गया था और इसके बाद उसने काबुल में बड़ी मुश्किलों का सामना करते हुए किसी प्रकार 1526 ई० में भारत पर विजय प्राप्त की। अब हम निम्नलिखित उपभागों में उजबेगों के साथ मुगलों के संबंधों की विवेचना करेंगे।

7.3.1 बाबर और हुमायूं

बाबर के मध्य एशिया से बाहर निकल जाने के बाद (देखें इकाई 1) उजबेगों तथा मुगलों के बीच परंपरागत संघर्ष कुछ समय के लिए बंद हो गया था क्योंकि दोनों के बीच संघर्ष के लिए ऐसा कुछ शेष न रह गया था जैसा कि कंधार के मामले को लेकर ईरानियों के साथ था। 1528 ई० में कुचूम तथा अन्य उजबेग सुल्तानों ने भारत में अपने दूतों को बाबर की विजय पर उसको बधाई देने के लिए भेजा। उजबेगों की ओर से भेजे गये इस मित्रवत् संदेश को मुगलों ने कोई विशेष महत्व न दिया और अपने पूर्वजों की रियासत से बेदखल होने को वे कभी भी न भुला सके। ट्रांसऑक्सियाना को जीतने की इच्छा के बावजूद भी मुगलों को संभवतः यह भी प्रतीत होता था कि उनकी यह अभिलाषा पूर्णतः अव्यवहारिक थी क्योंकि उत्तर-पश्चिमी सीमा की सुरक्षा उनके लिए एक स्थायी समस्या बनी हुई थी और कंधार को भी जीतना उनके लिए एक स्वप्न मात्र था। फिर वे ट्रांसऑक्सियाना को विजयी करने की योजना कैसे बना सकते थे तथा कैसे इस दूरदराज की "पूर्वजों की भूमि" पर प्रभावशाली नियंत्रण को कार्यरूप दे सकते थे? इन सबके बावजूद भी बाबर ने हुमायूं को ट्रांसऑक्सियाना के कुछ भाग को जीतने के लिए प्रोत्साहित किया। हुमायूं ने असफलतापूर्वक या अस्थायी सफलता के साथ अपने प्रयासों को जारी रखा। इसके बावजूद ये प्रयास कोई स्थायी प्रभाव न छोड़ सके क्योंकि भारत में मुगलों द्वारा अधीन किये गये क्षेत्रों का अभी विस्तार एवं सुदृढ़ीकरण होना शेष था। आगामी वर्षों में उजबेगों तथा मुगलों दोनों को बहुत सी आंतरिक समस्याओं का सामना करना पड़ा जिसके कारण वे विस्तार अभियान को आगे न बढ़ा सके। अब्दुल्ला खां के उद्भव (1560-98) के साथ मुगल-उजबेग संबंधों के इतिहास में एक नये युग का सूत्रपात हुआ क्योंकि अब्दुल्ला खां ने अकबर के साथ व्यापक संपर्कों को स्थापित करने का प्रयास किया।

7.3.2 अकबर

अकबर के शासन के दौरान मुगल-उजबेग संबंधों का तीन चरणों में– (1) 1572-1577, (2) 1583-89, तथा (3) 1589-98, विवेचन किया जा सकता है।

प्रथम चरण (1572-1577)

अब्दुल्ला द्वारा 1572 ई० तथा 1577 ई० में दो दूत मण्डल भेजे गये। इन दूत मण्डलों का उद्देश्य न तो अकबर से सैनिक सहायता प्राप्त करना था और न ही ईरानी साम्राज्य के विरुद्ध किसी गठबंधन को बनाने की संभावना खोजना था। बदखशां तथा कंधार जैसे क्षेत्रों में रुचि रखने वाले अब्दुल्ला खां की योजनाओं को लेकर उसके लिए यह स्वाभाविक था कि

वह अकबर के साथ मैत्रीपूर्ण संबंधों को विकसित करने के लिए प्रयास करे और इस प्रकार वह इस ओर से खतरे को टाल सकता था।

जानकारी प्राप्त करने एवं सांत्वना देने वाले इन दो दूत मण्डलों को निम्नलिखित उद्देश्यों के लिए भेजा गया–

अ) ईरान तथा कंधार के प्रति अकबर के दृष्टिकोण का आकलन करने हेतु,

ब) बदखशां के संदर्भ में अकबर की सामान्य नीति का पता लगाने, तथा यदि संभव हो तो

स) बदखशां के विषय में अकबर को अपनी स्वयं की योजनाओं के बारे में गलतफहमी में रखना।

उत्तर-पश्चिमी सीमा पर मिर्जा हकीम (काबुल का शासक) के विद्रोहों के कारण और मिर्जा हकीम की ईरान के शासक शाह इस्माइल द्वितीय के साथ मित्रता के कारण भी अकबर को यह भय हुआ कि कहीं अब्दुल्ला खां, मिर्जा हकीम तथा शाह इस्माइल द्वितीय के बीच त्रिपक्षीय गठबंधन न बन जाये। दूसरे, अकबर बाह्य मामलों में स्वयं को उलझाना नहीं चाहता था और इन्हीं कारणों से अकबर ने भी अब्दुल्ला खां के प्रति मित्रतापूर्ण दृष्टिकोण अपनाया। अब्दुल्ला ने 1578 ई० में पुनः अकबर के पास अपना एक दूत भेजा। ईरान पर संयुक्त तौर पर आक्रमण करने के प्रस्ताव को अकबर ने मानने से इंकार कर दिया। ऐसा प्रतीत होता है कि अब्दुल्ला की इस पत्र के प्रति प्रतिक्रिया सकारात्मक न थी क्योंकि आगामी एक दशक तक उसने मुगल दरबार में अपना कोई दूत नहीं भेजा।

1577 ई० से अब्दुल्ला खां तथा अकबर की क्रमशः स्थितियों में हुए परिवर्तन को देखा जा सकता है जिसके कारणवश एक दूसरे के प्रति उनकी नीतियों में परिवर्तन हुआ। 1583 ई० तक अब्दुल्ला खां ने संपूर्ण ट्रांसऑक्सियाना को विजित कर लिया और उसने अपने परिवार के उन सभी सदस्यों, जो उसके विरोधी थे, की तरफ से खतरा टलवा दिया था। 1583 ई० में अपने पिता की मृत्यु के बाद वह खान भी बन गया और अब वह मुस्लिम जगत में अपने सभी प्रतिद्वंद्वियों से प्रतियोगिता कर सकता था। अब्दुल्ला ने 1584 ई० में बदखशां को जीत लिया और दो मिर्जाओं अर्थात मिर्जा शाहरुख तथा मिर्जा हकीम को यह क्षेत्र छोड़ना पड़ा। अब अब्दुल्ला ने अपनी स्थिति को मजबूत करने के साथ ही अकबर के प्रति एक कड़ा एवं मांग करने वाला दृष्टिकोण अपनाना शुरू कर दिया और अकबर का स्वयं का दृष्टिकोण सुलह-समझौते वाला बनने लगा।

इस समय तक अकबर की मुश्किलें और बढ़ीं। कश्मीर तथा गुजरात में विद्रोह हुए और काबुल, सवाद तथा बाजौर में आदिवासियों के विद्रोह हुए। मिर्जा हकीम (1585 ई०) की मृत्यु हो जाने के बाद उत्तर-पश्चिमी सीमा और भी असुरक्षित हो गई। ईरानी साम्राज्य भी असफल एवं अयोग्य तथा अर्ध-अंधे शासक खुदाबन्दा (1577-1588 ई०) के अधीन कमजोर पड़ गया और साम्राज्य ऑटोमनों के आक्रमणों तथा कुलीनों के आंतरिक कलहों के कारण बिखर गया था।

दूसरा चरण (1583-1589 ई०)

कई वर्षों बाद अब्दुल्ला ने पुनः अपना एक दूत 1586 ई० में अकबर के पास भेजा। अकबर ने इसका प्रत्युत्तर हकीम हुमेम को 1586 ई० में अपने दूत के रूप में भेजकर दिया। इसकी व्याख्या करना बड़ा मुश्किल है कि अब्दुल्ला ने एक समय में ही दो अलग-अलग पत्रों को भेजने का निर्णय क्यों लिया। फिर भी इन पत्रों को मात्र कल्पित मानकर नहीं छोड़ा जा सकता क्योंकि अकबर ने अपने पत्र में उन सभी प्रश्नों का उत्तर दिया जिनको इन दोनों पत्रों में अलग-अलग उठाया गया था। अब्दुल्ला के लिखित एवं मौखिक संदेश के स्तर से यह स्पष्ट है कि इस दूत को भेजने का उद्देश्य ईरान के विरुद्ध आक्रमण करने के लिए अकबर का सहयोग प्राप्त करना न था अपितु अकबर को ईरान के शासक को कोई भी सहायता भेजने से रोकना था। अब्दुल्ला का कहना था कि उसने 1578 से 1585 तक अकबर के सभी पत्र व्यवहार को इसलिए बंद कर दिया था क्योंकि "अकबर ने अधिमनोविज्ञानीय धर्म तथा जोगियों का व्यवहार धारण कर लिया था और वह पैगम्बर

के धर्म से भटक गया था।'' अकबर ने अपने दूत हकीम हुमेम के माध्यम से भेजे गये उत्तर में यह कहा कि यह ''कुछ निश्चित विरोधी लोगों की जालसाजी एवं आरोपण मात्र है।''

तीसरा चरण (1589-98)

अब्दुल्ला के दरबार से अहमद अली अतालिक का भेजा जाना उजबेग-मुगल संबंधों में तीसरे चरण का प्रारंभ था। अब्दुल्ला ने अपने दूत के माध्यम से जो पत्र भेजा था उसमें अब्दुल्ला ने मित्रता करने की पेशकश की और पारस्परिक एकता की नींव को मजबूत करने तथा दोनों के बीच हिन्दूकुश को सीमा बनाने के लिए प्रयत्न करने हेतु इस दूत को भेजा। अकबर ने 1598 ई० में कंधार की विजय के बाद ही शांति के इस प्रस्ताव को औपचारिक तौर पर स्वीकार किया। अकबर के प्रति अब्दुल्ला द्वारा अपनाये जाने वाले सुलह-समझौते के इस दृष्टिकोण के कुछ सम्भावित कारण थे—

1) बदखशां के शासक का पौत्र मिर्जा शाहरुख तथा मिर्जा हकीम के पुत्र भारत आए और अकबर स्वयं काबुल में रुका रहा।

2) 1589 ई० से ईरान की स्थिति में सुधार होना प्रारंभ हो गया था। शाह अब्बास ने ऑटोमन शासकों के साथ एक अपमानजनक संधि इसलिए की क्योंकि वह उजबेगों से निबटना चाहता था और उसने उजबेगों के विरुद्ध अकबर की सहायता के लिए एक पत्र भेजा।

3) कज्जाकों के साथ अब्दुल्ला के तनावपूर्ण संबंधों ने एक नया मोड़ लिया। इस समय कज्जाकों एवं रूस के जारों के बीच के कूटनीतिक संबंध 1550 से 1599 ई० तक सक्रिय रूप से जारी थे तथा इन कूटनीतिक संबंधों का प्रारंभ तैमूरी शासन के समय 15वीं सदी में हुआ था। उजबेग शासकों ने कज्जाकों तथा खानेत (khanate) को 25 दूत मंडल भेजे जिनमें से 6 वापसी दूत मंडल थे (जिनमें जेन किंगस्न का भी था) लेकिन कज्जाकों ने उनको कोई विशेष महत्व नहीं दिया। दोनों के बीच संबंध अच्छे नहीं थे और उनको आक्रामक कूटनीतिक आर्थिक संबंधों की संज्ञा दी जा सकती थी। रूस के द्वारा कजान, अस्तरखान तथा साइबेरिया को जीत लिए जाने के बाद कज्जाक तथा रूसियों के बीच वाणिज्य तथा व्यापार के वे केन्द्र नष्ट हो गये थे जिनकी स्थापना तैमूर के द्वारा की गई थी। इसी प्रकार कज्जाक क्षेत्र को लेकर रूस के जार एवं खान के बीच के संघर्ष ने कज्जाकों के पक्ष में संतुलन बना दिया क्योंकि उनके शासक तवक्कुल ने 1594 ई० में अपने दूत मौहम्मद को रूस भेजा जो वहाँ से न केवल सशस्त्र सेना साथ लेकर आया अपितु जार से कज्जाकों को पूर्ण कूटनीतिक सुरक्षा प्रदान करने का वचन भी प्राप्त किया।

4) अब्दुल्ला खां के पुत्र अब्दुल मोमिन के विद्रोह से उसकी स्थिति और बिगड़ गई। सन् 1592 ई० में उसने दीन मौहम्मद (अब्दुल्ला खां का भतीजा) को यह सलाह देते हुए **निशान** भेजे कि उसे कंधार को जीतने का विचार छोड़ देना चाहिए क्योंकि अकबर के साथ यह समझौता हो चुका है कि हिन्दूकुश एवं कंधार को दोनों राज्यों के बीच सीमा निर्धारण का आधार माना जाना चाहिए।

इन परिवर्तित परिस्थितियों में अकबर को प्रोत्साहन मिला और वह अब्दुल्ला खां के आक्रामक इरादों के प्रति भी पूर्णतः सजग था। इसी कारण से अकबर स्वयं पंजाब पहुंचा और 1589 ई० से कंधार पर अधिकार करने की योजना बनाने लगा। अकबर ने कंधार जीत लिया और अंततः वह मिर्जाओं को भारत वापस लाने में सफल हो गया। कंधार की विजय के बाद अकबर ने अब्दुल्ला खां के साथ अपने संबंधों को पुनः स्थापित करने की आवश्यकता को महसूस किया। कंधार पर अधिकार करने के बाद से ही मुगल सेनायें गर्मसीर तथा जमींदावर पर अधिकार करने के लिए उजबेगों के साथ सशस्त्र संघर्ष में अब्दुल्ला के साथ व्यस्त थीं इस कारण अब्दुल्ला के साथ सामान्य संबंध बनाना और भी आवश्यक हो गया था। सन् 1594 ई० में ऑटोमन सम्राट सुल्तान मुराद द्वितीय ने ईरानी क्षेत्र पर आक्रमण करने के लिए सहयोग करने हेतु अब्दुल्ला के पास एक पत्र भेजा। ऑटोमन उजबेग संभावित गठबंधन के भय ने भी अकबर को और सजग कर दिया किंतु

उजबेगों तथा ऑटोमन साम्राज्य के बीच कोई सैनिक गठबंधन इस कारण न हो सका क्योंकि उजबेग पत्रवाहक तब तक ऑटोमन दरबार नहीं पहुँच पाया था। इसी बीच ऑटोमन शासक सुल्तान मुराद तृतीय का 1595 ई० में देहांत हो गया।

लेकिन उजबेगों का भय निरंतर बना रहा क्योंकि अब्दुल्ला ने नये ऑटोमन शासक मौहम्मद के साथ पत्र व्यवहार प्रारंभ कर दिया था और ईरान पर संयुक्त आक्रमण करने का प्रस्ताव भी रखा। कंधार पर अधिकार करने के बाद ख्वाजा अशरफ नक्शबंदी के माध्यम से अकबर ने तुरंत एक दूत भेजने की आवश्यकता को महसूस किया और उसने दोनों राज्यों की सीमाओं के रूप में हिन्दूकुश को स्वीकार करने की अपनी इच्छा व्यक्त की। इन संदेशों को साथ ले जाने वाले दूत की भेंट अब्दुल्ला से सितंबर 1597 ई० में करशी में हुई। अब्दुल्ला ने मुगल दूत के साथ अपने संदेश वाहक के रूप में मीर कुरैश को भेजा लेकिन उनके भारत पहुंचने से पूर्व ही उजबेग शासक अब्दुल्ला की 1598 ई० में मृत्यु हो गई। भारतीय राजदूत वापस भारत लौट गया किंतु मीर कुरैश भारत पहुंचने में असमर्थ रहा।
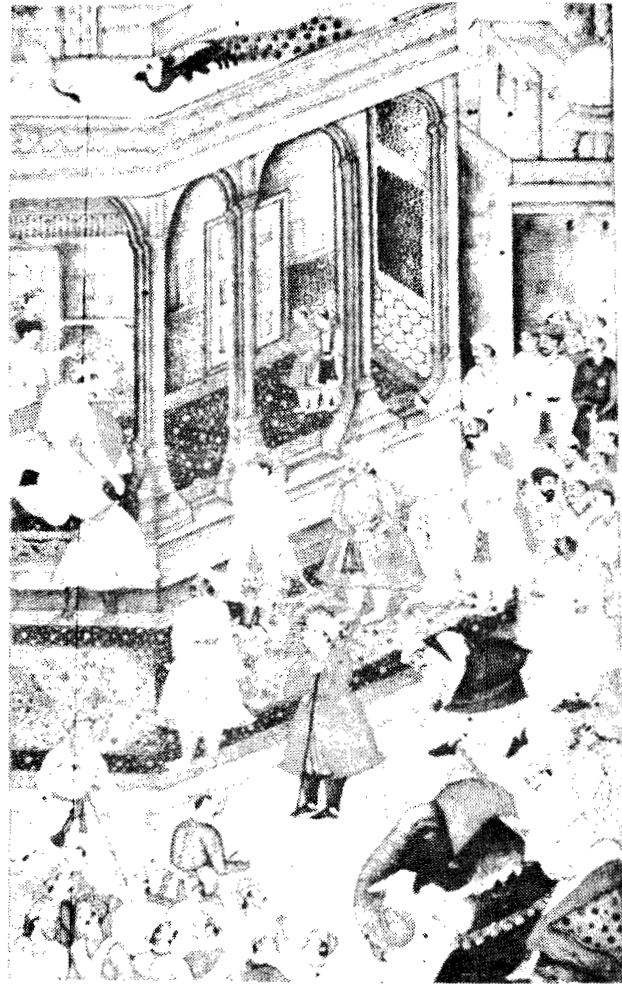
बदख्शां और दक्खनी राज्यों के दूत मुगल शासक अकबर को नज़राना भेंट करते हुए

7.3.3 जहांगीर

तूरान के साथ जहांगीर के संबंध मुख्यतः ईरान के साथ उसके संबंधों से सुनिश्चित होते थे। उसकी आत्मकथा से स्पष्ट होता है कि उसका लगाव तूरान के साथ था इसलिए उसकी योजनाओं में तूरान की विजय शामिल न थी। जहांगीर के उजबेगों के साथ संबंधों का अनुमान अंग्रेज यात्री थौमस कोरयाट के उस अनुरोध से जिसमें 1616 ई० में एक सिफारिशी पत्र के लिए कहा गया था, के प्रति जहांगीर के उत्तर से लगाया जा सकता है। ''तातार राजकुमारों एवं उसके बीच कोई विशेष मित्रता नहीं है और उसकी सिफारिशें कोरयाट को समरकन्द में मदद नहीं कर सकेगी।''

जहांगीर ने अपने शासनकाल के प्रथम दशक में उजबेगों के साथ कोई सक्रिय संबंध नहीं बनाये। उसने केवल ऐसे प्रयासों पर ही ध्यान दिया जो उसकी सीमाओं पर प्रसारवादी योजनायें थी। जहांगीर की उजबेगों के प्रति इस उदासीनता में तब परिवर्तन हुआ जबकि शाह ने अपने दूत जैनुल बेग के द्वारा कंधार के प्रश्न को उठवाया। फरवरी 1621 ई० में मीर बारका को एक "अति गोपनीय उद्‌देश्य" से एक दूत के रूप में उजबेग शासक इमाम कुली के पास भेजा गया और इसके बदले उजबेग शासक ने अपने दूत को नूरजहां बेगम के पास भेजा। इमामी कुली के एक गोपनीय संदेश के साथ उजबेग संत अब्दुर रहमान ख्वाजा के अधीन दूतमंडल भेजा गया। इस प्रतिनिधि मंडल का जहांगीर ने उत्साह पूर्वक स्वागत किया क्योंकि इस संदेश में ईरान की आलोचना की गई थी और ईरानियों के विरुद्ध मुगलों के साथ गठबंधन करने की भी सिफारिश की गई। जहांगीर को पवित्र युद्ध (**जेहाद**) में शामिल होने का निमंत्रण दिया गया था और यह इमाम कुली के लिए जरूरी था क्योंकि न केवल इमाम कुली अपने पिता कीं मृत्यु का बदला लेना चाहता था अपितु वह मक्का को जाने वाले उस मार्ग को भी मुक्त करना चाहता था जिस पर ईरानियों का नियंत्रण था। यद्यपि जहांगीर ने टर्की के ऑटोमन सुल्तान के मित्रतापूर्ण प्रस्ताव की अवहेलना की थी लेकिन उजबेग-ऑटोमन संभावित गठबंधन को लेकर वह काफी चिंतित था। सन् 1624 ई० में बगदाद पर अधिकार करने के बाद सुल्तान मुराद ने इमाम कुली के पास ईरान के विरुद्ध गठबंधन बनाने के लिए सकारात्मक उत्तर भेजा और उसको अपने आधीन करने के लिए ईरान को उकसाया। ऑटोमन सुल्तान ने इसी प्रकार का संदेश जहांगीर के पास भेजा और ईरान के विरुद्ध त्रिपक्षीय गठबंधन बनाने पर बल दिया। 1625-26 ई० तक बहुत से पत्रों का आदान-प्रदान हुआ किंतु 1627 ई० में जहांगीर की मृत्यु हो जाने से इस योजना को कार्यान्वित न किया जा सका।

7.3.4 शाहजहां

शाहजहां के सत्तासीन होने के साथ ही उजबेग-मुगल संबंधों में एक नया मोड़ आया। शाहजहां की विदेशनीति के निम्नलिखित तीन लक्ष्य थे–

i) कंधार को पुनः प्राप्त करना,

ii) पूर्वजों की भूमि को पुनः विजित करना, और

iii) दक्खन पर अपने पूर्ण प्रभुत्व को स्थापित करना।

अपने उपरोक्त लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए वह ईरान तथा ट्रांसऑक्सियाना दोनों समकालीन शक्तियों की मित्रता को इस ढंग से सुनिश्चित करना चाहता था कि जब वह कंधार पर आक्रमण करे तब उसे ईरानियों के विरुद्ध ट्रांसऑक्सियाना की मित्रता का लाभ मिले और जब वह ट्रांसऑक्सियाना पर आक्रमण करे तब ईरान का सहयोग प्राप्त हो। शाहजहां ने शुद्ध कूटनीति का प्रयोग करते हुए नजर मौहम्मद के काबुल पर किये गये आक्रमण को अनदेखी कर अपने एक दूत को बुखारा में इमाम कुली के पास भेजा। इन दूतों के आदान-प्रदान द्वारा ईरान के विरुद्ध एकता पर बल दिया गया। शाहजहां का दूतमंडल सफदर खां के नेतृत्व में गया जो अप्रैल 1633 ई० में वापस लौटा। मीर हुसैन के रूप में दूसरा दूत मई 1637 ई० में गया। शाहजहां ने 1636 ई० में मुराद चतुर्थ को एक पत्र लिखा। इस पत्र में शाहजहां ने कंधार को विजित करने की अपनी इच्छा व्यक्त की और ईरान के विरुद्ध त्रिपक्षीय (मुगल-उजबेग तथा ऑटोमन) गठबंधन बनाने का प्रस्ताव किया। लेकिन इनमें से किसी भी शासक की सहायता के बगैर शाहजहां ने कंधार को विजित करने में सफलता प्राप्त की।

1638 ई० में कंधार पर विजय प्राप्त करने के बाद अब शाहजहां का एक मात्र लक्ष्य अपने पूर्वजों की भूमि ट्रांसऑक्सियाना को विजित करना था। ईरान की सीमाओं से लगे मारूचक पर उजबेगों के आक्रमण के बाद ईरान तथा मुगलों के मध्य मई 1640 ई० में मित्रतापूर्ण संबंध कायम हो गये। बल्ख पर एक संयुक्त आक्रमण का प्रस्ताव रखा गया किंतु, किसी कारणवश इसको कार्यान्वित न किया जा सका।

इस समय ईरानियों एवं मुगलों के बीच हुए पत्र-व्यवहार से स्पष्ट है कि मुगलों ने ईरानियों

पर सीमित समर्थन देने के लिए दबाव डाला और इसमें सफलता प्राप्त की जबकि ईरानियों के पत्रों से उनका भय एवं चिंता प्रतिलक्षित होती है। इसी प्रकार की चिंतायें मुगलों के निरुत्साह सहयोगी उजबेगों को भी थी क्योंकि वे भी शाहजहां की प्रसारवादी अभिलाषा को समझ गए थे। शीघ्र ही मुगलों को इसका अवसर प्राप्त हुआ।

इस समय उजबेग साम्राज्य अराजकता के दौर से गुजर रहा था। उजबेगों के लोकप्रिय शासक इमाम कुली की दृष्टि चले जाने के कारण उसने नवम्बर 1641 ई० में अपने भाई नज्र मौहम्मद के पक्ष में पद त्याग दिया। नज्र मौहम्मद के निरंकुश एवं एकछत्र शासन ने कुलीनों को विरोधी बना दिया और वें उसके पुत्र अब्दुल अजीज का समर्थन करने लगे। निराशा के इन क्षणों में नज्र मौहम्मद ने शाहजहां की सहायता प्राप्त करने के लिए प्रयास किये किंतु शाहजहां ने इस अवसर का लाभ उठाते हुए बल्ख को विद्रोह से बचाने के बहाने से बल्ख पर अधिकार कर लिया। 1646 ई० के प्रारंभ में मुगल सेनाओं ने सफलतापूर्वक बल्ख में प्रवेश किया। नज्र मौहम्मद को ईरान में शरण लेने के लिए बाध्य होना पड़ा। शाहजहां ने इस समय दो पत्र लिखे। एक पत्र नज्र मौहम्मद को बल्ख की विजय की सूचना देते हुए किसी क्षमा याचना या कारण दिये बगैर लिखा और दूसरा पत्र ईरान के शासक शाह अब्बास द्वितीय को बल्ख पर अधिकार करने की सूचना देने के लिए लिखा और इस प्रकार बल्ख विजय मुगलों द्वारा समरकंद एवं बुखारा को विजित करने की पृष्ठभूमि थी। बल्ख विजय को बल्ख के सैयदों को आवश्यक सुरक्षा प्रदान करने के आधार पर उचित ठहराया गया। इस पत्र के द्वारा यह भी संदेश दिया गया कि नज्र मौहम्मद को मक्का भेजा जाये और उसे तूरान न लौटने दिया जाये। ईरानियों ने भी नज्र मौहम्मद के मामले का समर्थन करने में स्वयं ही संकोच किया क्योंकि उनको उसके सफल होने में संदेह था। वास्तव में शाहजहां ने तूरान के मामलों में ईरानियों की तटस्थता सुनिश्चित करने के लिए ईरान को तीन दूत भेजे। फिर भी नज्र मौहम्मद के प्रति ईरानियों का दृष्टिकोण तय करने में यह एक मात्र कारक न था। उसकी सहायता न करने की ईरानियों की अनिच्छा का कारण न केवल नज्र मौहम्मद का हठी चरित्र था अपितु उजबेगों-ईरानियों के मध्य परंपरागत शत्रुता भी थी। ईरान में एक योग्य नेतृत्व के अभाव में भी कोई सुनिश्चित नीति न तैयार हो सकी। ईरान में दूत के पहुंचने से पूर्व ही नज्र मौहम्मद तूरान की ओर चल पड़ा था।

बल्ख तथा अन्य क्षेत्रों पर विजय उन पर अधिकार करने की अपेक्षा सहज प्रतीत हुई। कई कारणों से यह विजय कठिन परिस्थितियों में हुई। इन कारकों में जहां तक अपर्याप्त संचार साधन थे वहीं इनमें खराब मौसम, आदमियों पर धन तथा माल के रूप में भारी खर्च एवं स्थानीय जनता की शत्रुता भी शामिल थे। उसे खाली करवाना भी मुगलों के लिए मुश्किल था और यह समान रूप से खाली करना ईरानियों के लिए भी कठिन था। इस प्रकार अक्टूबर 1647 ई० में नज्र मौहम्मद के साथ एक समझौता किया गया।

1650 ई० में शाहजहां ने तूरान के उजबेग शासक अब्दुल अजीज के पास एक दूत भेजा। किंतु तूरान में हुए राजनैतिक पुनर्गठबंधन के कारण अब्दुल अजीज के लिए मुश्किल स्थिति पैदा हो गई थी। उसके भाई सुभान कुली का समर्थन उसके ससुर अबुल गाजी के द्वारा किया जा रहा था। अबुल गाजी ख्वारिज़्म का शासक और ईरान का पक्का समर्थक था। शाहजहां ने अब्दुल अजीज पर काबुल पर आक्रमण करने के लिए दबाव डाला। शाहजहां के द्वारा ऑटोमन शासकों मुराद तृतीय तथा मौहम्मद चतुर्थ के साथ गठबंधन करने के लिए किए गए प्रयास असफल रहे। ऑटोमन शासकों द्वारा शाहजहां को भेजे गये पत्रों का अभिप्राय शाहजहां को पसंद नहीं आया और न ही यह पारस्परिक समझ के लिए उत्साहवर्द्धक था। बल्ख पर मुगलों के अधिकार को भी ऑटोमन शासकों ने पसंद नहीं किया। इस तरह मुगल-ऑटोमन संबंध सुदृढ़ न हो सके।

बोध प्रश्न 2

1) तीसरे चरण में (1589-98 ई०) में उजबेग-मुगल संबंधों की क्या विशिष्ट विशेषतायें थीं।

....

....

....

....

....

2) उजबेगों के प्रति शाहजहां की नीति के क्या उद्देश्य थे?

....

....

....

....

....

7.4 ईरान के साथ संबंध

मुगल-उजबेग संबंधों से आपको भली-भांति परिचित कराने के पश्चात अब हम ईरान के साथ मुगल संबंधों की प्रकृति की विवेचना करेंगे।

7.4.1 बाबर तथा हुमायूं

शाह इस्माइल के साथ बाबर के संबंधों की विवेचना हम खंड 1 की इकाई 1 में कर चुके हैं। शाह इस्माइल की मृत्यु (1524 ई०) एवं उसके पुत्र शाह तहमस्प (1524-76 ई०) के सिंहासनारूढ़ होने के बाद में बाबर ने शाहइस्माइल की मृत्यु पर एक शोक संदेश तथा तहमस्प के सिंहासनारूढ़ होने पर बधाई संदेशों के साथ एक दूत मंडल को ख्वाजगी असद के नेतृत्व में नये शाह के पास भेजा और वह ईरानी दूत सुलेमान आगा के साथ वापस लौटा।

इसी बीच हसन चैलेबी तथा उसके छोटे भाई के अधीन दो ईरानी दूतमंडल एक के बाद एक मुगल दरबार पहुंचे। बाबर ने भी उत्तर में अपने दूत को भेजा। इन पत्रों के उद्देश्यों तथा मौखिक संदेशों के आदान-प्रदान के कोई भी लिखित साक्ष्य उपलब्ध नहीं है।

बाबर की मृत्यु के बाद (1530 ई०) हुमायूं के भाई कामरान के पास काबुल का राज्य था तथा कंधार और लाहौर तक ईरानियों के विरुद्ध मजबूती से क्षेत्रीय प्रसार कर लिया गया था। 1534-35 ई० में ईरानी राजकुमार साम मिर्जा तथा उसका महत्वाकांक्षी कुलीन अघजीवर खां कामरान तथा कंधार के गवर्नर ख्वाजा कला के साथ संघर्ष में व्यस्त थे। किंतु अघजीवर खां एक मुठभेड़ में मारा गया तथा साम मिर्जा हिरात वापस लौट गया। इस घटना के कारण शाह तहमस्प ने मुगलों के विरुद्ध 1537 ई० में सात से आठ हजार सैनिकों के साथ एक सैनिक अभियान का नेतृत्व किया। एक समकालीन इतिहासकार का मानना है कि गवर्नर ख्वाजा कलां के द्वारा स्थिति का मूर्खतापूर्ण ढंग से संचालन करने से उसे कंधार के किले को शाह के सम्मुख समर्पण करना पड़ा जिसके कारण आसपास के क्षेत्र भी ईरानियों के अधीन हो गये। जिस समय शाह तहमस्प अजरबैजान में विद्रोह से घिरा था और उसकी पश्चिमी सीमाओं पर तनाव बढ़ रहा था तब कामरान ने सन् 1537-38 ई० में सरलता से कंधार को पुनः विजित कर लिया।

तेरह वर्ष (1530-43) हुमायूं ने ईरान के साथ सक्रिय संपर्क बना कर नहीं रखा था।जब उसको 1543 ई० के मध्य में भारत से खदेड़ दिया गया था तब हुमायूं ने जनवरी 1544 ई० में शाह को एक पत्र लिखा। हुमायूं तथा तहमस्प एवं उसके अधिकारियों के बीच जिन पत्रों का आदान-प्रदान हुआ व भारत-ईरानी संबंधों के विभिन्न चरणों पर प्रकाश डालने के लिए उपलब्ध हैं। सीस्तान के ईरानी गवर्नर अहमद सुल्तान शामलू ने शाही भगोड़े को आमंत्रित किया और हुमायूं ने ईरान में अपने पचास हताश वफादारों सहित शरण ली। ऐसा उसने बैरम खां की सलाह पर किया। तहमस्प को स्वयं अपने विद्रोही भाइयों के हाथों हार का सामना करना पड़ा था। उसने हुमायूं की मुश्किलों के प्रति सहानुभूति दिखायी।

हुमायूं ने सितंबर 1545 ई० में ईरानी सेनापति बुदग खां से कंधार छीन लिया। यद्यपि दोनों पक्षों के बीच संबंधों में अस्थायी तौर पर तनाव पैदा हो गया था जिससे यह अनुमान लगाया जाने लगा था कि शिया धर्म को धारण करने की मांग से दरार पैदा हुई लेकिन दोनों ओर से कुल मिलाकर सौहार्दपूर्ण संबंधों को बनाकर रखा गया। शाह तहमस्प ने वलंद बेग तक्कालूर की अधीनता में 1546 ई० में काबुल की विजय पर हुमायूं को बधाई देने के लिए दूतमंडल भेजा। वापस लौटते दूत के माध्यम से हुमायूं ने अपने पत्र में प्रसिद्ध ईरानी चित्रकार ख्वाजा अब्दुस समद तथा अन्य कुछ प्रतिभावान व्यक्तियों को अपनी सेवा में शामिल करने हेतु निमंत्रण भेजा। हुमायूं ने अपने दूत ख्वाजा जलालुद्दीन महमूद (1548 ई० में भेजा गया) को वापस बुला लिया। एक अन्य दूत काजी शेख अली को 1549 ई० में हुमायूं ने बहराम मिर्जा की मृत्यु पर शोक संदेश देने तथा हुमायूं के विरुद्ध उसके भाई कामरान मिर्जा के विद्रोह को वर्णित करने के लिए ईरान भेजा। शाह तहमस्प का दूत कमालुद्दीन उलुग बेग उसका संदेश लेकर आया। हुमायूं को सलाह दी गई कि कामरान के प्रति विनम्रता का रवैया अपनाये और जब भी आवश्यक होगा तब हुमायूं को सैनिक सहायता प्रदान करने का प्रस्ताव रखा गया। तहमस्प की ओर से अंतिम दूतमंडल 1553 ई० की प्रारंभिक गर्मियों में आया और इसके बाद हुमायूं भारत में अपने प्रभुत्व को स्थापित करने तथा सुदृढ़ करने में व्यस्त हो गया।

7.4.2 अकबर

1556 ई० में हुमायूं की मृत्यु से पुनः कंधार की समस्या पैदा हो गई। शाह द्वारा कंधार पर अधिकार कर लिये जाने से ईरान के साथ संबंधों में तनाव पैदा हो गया। यही कारण था कि तहमस्प ने 1562 ई० में अकबर के पास सईद बेग सफवी के नेतृत्व में जो दूत मंडल भेजा (इसको हुमायूं की मृत्यू पर शोक संदेश तथा अकबर के सत्तासीन होने पर बधाई देने के लिए भेजा गया था) उसका कोई उत्तर नहीं दिया गया। शाह तहमस्प ने सुल्तान महमूद भक्करी को कुलीन वर्ग में शामिल करने के लिए दो सिफारिशी पत्र लिखे किंतु उनकी भी अवहेलना की गई। जैसा कि अबुल फजल ने लिखा है कि राज्य नियुक्तियां गुणों के आधार पर होती थीं न कि सिफारिशों के आधार पर। उस समय भी कोई उत्तर न दिया गया जबकि 1572 ई० में खुदाबंदा (ईरानी सिंहासन का दावेदार) ने यार अली बेग को अकबर के पास उत्तराधिकार के प्रश्न को लेकर होने वाले युद्ध में उसके समर्थन की आशा के साथ भेजा। तहमस्प की मृत्यु के बाद (मई, 1576 ई०) शाह इस्माइल द्वितीय सिंहासनारूढ़ हुआ। उसने हकीम मिर्जा के साथ मधुर संबंध बनाकर रखे। नवम्बर 1577ई० में खुदाबंदा के सिंहासनारूढ़ होने पर ईरान विद्रोह की चपेट में आ गया। 1583 ई० में राजकुमार अब्बास ने मुर्शिद तवरीजी को अकबर के पास खुरासान प्रांत में उसकी स्थिति को मजबूती प्रदान करने हेतु भेजा। किंतु कंधार के हाथ से निकल जाने के कारण अकबर ईरानियों से नाराज था। अकबर ने याचिका की अवहेलना की तथा अबुल फजल ने इस याचिका को "एक विद्रोही पुत्र की अपने पिता के विरुद्ध याचिका" की संज्ञा दी। सन् 1591ई० में शाह अब्बास ने एक बार फिर यादगार रुमल के नेतृत्व में एक दूतमंडल को अकबर के पास उस समय भेजा जबकि उसको उजबेगों से एक बड़े खतरे का सामना करना पड़ा। नवंबर 1594 ई० में जियाउद्दीन नामक एक और दूत भेजा गया। पुनः मौन रखा गया तथा रिश्तों में रूखापन 1594 ई० तक बना रहा जब तक कि मुगल सेनाओं ने कंधार में प्रवेश नहीं किया तथा जमींदावर एवं गमसीर को विजित नहीं कर लिया।

1596 ई० में ख्वाजा अशरफ नक्शबंदी के माध्यम से अकबर ने प्रथम दूत को शाह अब्बास के पास भेजा। इस पत्र में अकबर ने अपनी कंधार विजय को यह कहकर उचित ठहराया कि शाह के प्रति मिर्जाओं की वफादारी संदिग्ध थी। पहले पत्रों की प्रति अपने मौन रहने की व्याख्या यह कह कर की कि वह उजबेग दूतों के रहते शाह की समय पर मदद करने में असफल रहा। 1598 में शाह अब्बास ने मनुचिहिर बेग को दूत के रूप में वापस लौटते भारतीय दूत के साथ भेजा। एक अन्य दूत मिर्जा अली बेग ने अकबर को कंधार किले के अलावा शेष सभी किलों को विजित करने की सूचना इस आशय के साथ दी कि अकबर उसको लौटा देगा। 1598 ई० में अब्दुल्ला खां की मृत्यू हो जाने के पश्चात अपनी

पश्चिमी सीमाओं को सुरक्षित समझ अकबर पंजाब से आगरा लौट आया। सन् 1602 ई० में मनुचिहिर बेग को अकबर द्वारा हटाये जाने के बाद शाह के पास मुगल दूत के रूप में मासूम भक्करी को भेजा गया। शाह ने दो पत्र भेजे एक अकबर को तथा दूसरा हमीदा बानू बेगम को। अकबर के अंतिम वर्षों में जहांगीर के विद्रोह के बादल छा गए। फराह, खुरासान तथा जमींदावर के सेनापतियों ने अवसर का लाभ उठाते हुए बुस्ट पर अधिकार कर लिया। यद्यपि कंधार के मुगल गवर्नर शाह बेग ने कड़ा प्रतिरोध किया था। शहजादा सलीम ने अकबर के जीवित रहते शाह अब्बास के साथ उपहारों के द्वारा स्वतंत्र मित्रतापूर्ण संबंध बनाकर रखे। इनके बावजूद अकबर के शासन काल के अंतिम दिनों में (22 अक्टूबर, 1605 ई०) ईरान के द्वारा कंधार क्षेत्र में आक्रमण तथा उसके बाद फरवरी, 1606 ई० में किये गये ईरानियों के संगठित आक्रमण के कारण दोनों शासकों के बीच शत्रुतापूर्ण रवैये की शुरुआत हुई। खसरों के विद्रोह के बावजूद भी ईरानी आक्रमण असफल साबित हुआ।

7.4.3 जहांगीर

बधाई एवं शोक संदेश देने वाला प्रथम ईरानी दूतमंडल मुगल दरबार में मार्च 1611 ई० में पहुंचा। यह दूतमंडल अगस्त 1613 ई० में मुगल दूत खान आलम के साथ ईरान वापस लौटा। शाह अब्बास ने कई बड़े एवं छोटे दूतमंडलों की मुगल दरबार में भेजा। इस प्रकार ऐसे अनेक राजनैतिक सौदेबाजियाँ करने वाले दूतमंडलों का आदान प्रदान हुआ। दोनों देशों के मध्य छुट-पुट वस्तुओं जैसे, पांडुलिपियों, कलाकृतियों, वैद्ययंत्रों तथा अन्य ऐसी अनोखी वस्तुओं का भी आदान प्रदान हुआ। कई बार शाह अब्बास ने जहाँगीर को कुछ विशिष्ट वस्तुएँ वेनिस एवं यूरोप से मंगवाकर भी भिजवाईं। शैरले भाइयों के नेतृत्व में एक दूतमंडल जून 1615 में पहुँचा। इससे पूर्व एवं बाद में भी इसी तरह के कई दूतमंडल मुगल दरबार में भेजे गये। किंतु जैनुल बेग के नेतृत्व में दूतमंडल के साथ पुनः कंधार समस्या को उठाया गया। लेकिन जहांगीर ने अपने सलाहकारों के साथ मशवरा करने के बाद ईरानिया को कंधार देने से इंकार कर दिया क्योंकि ऐसा करने पर इसे कमजोरी का प्रतीक माना जाता। जहांगीर का विश्वास जीत कर एवं मुगलों की थोड़ी लापरवाही का अनुमान कर शाह अब्बास ने 11 जून, 1622 ई० को कंधार पर अधिकार कर लिया। यद्यपि जहांगीर को अपनी सीमाओं पर होने वाले षड्यंत्रों की जानकारी थी किंतु बहुत से अन्य कारणों से वह कंधार को सुरक्षित न रख सका। दरबार की राजनीति, जहांगीर का गिरता स्वास्थ्य, नूरजहां एवं खुर्रम के बीच संबंधों में दरार, लाडली बेगम (नूरजहां के प्रथम पति से उसकी पुत्री) के जहांगीर के पुत्र शहर्यार के साथ विवाह को लेकर राजनैतिक शक्तियों का नया ध्रुवीकरण और खुर्रम (शाहजहां) का विद्रोह ऐसे कई कारण थे जिससे कंधार से हाथ धोना पड़ा।

शाह अब्बास ने कंधार को लेकर जहांगीर के क्रोध को दो दूतमंडल भेजकर शांत करने का प्रयास किया। एक अन्य दूतमंडल अक्टूबर 1625 ई० में मौहम्मद आगा के नेतृत्व में आया। जहांगीर ने इस पत्र का उत्तर कंधार के मामले पर कूटनीतिक मौन रखते हुए पुराने मित्रतापूर्ण संबंधों के लाभदायक स्वीकार्य के साथ दिया। अक्टूबर 1626 ई० में नूरजहां बेगम के पत्र सहित ईरान को जहांगीर द्वारा चार पत्र भेजे गये।

7.4.4 शाहजहां

चार दशक तक सफलतापूर्वक शासन करने के बाद शाह अब्बास की मृत्यु जनवरी, 1629 ई० में हो गई और नये एवं अनुभवहीन शासक शाह शफी मिर्जा ने अधीन ईरान अनिश्चिताओं के भंवर में फंस गया। शाहजहां कंधार पर पुनः अधिकार करने के लिए इस अवसर का लाभ उठाने के लिए उत्साहित था और शाहजहां ने न केवल ईरान के विद्रोही सरदार शेरखान का गर्मजोशी से स्वागत किया अपितु ईरान पर भारत, तुरान एवं टर्की की ओर से संयुक्त आक्रमण करने का प्रस्ताव मुराद चतुर्थ को लिखे पत्र में किया। शफी ने मौहम्मद अली बेग इम्हानी के नेतृत्व में दूतमंडल, शाहजहां के द्वारा 20 अक्टूबर, 1629 ई० को मीर बरकी के नेतृत्व में भेजे गये दूतमंडल के उत्तर में भेजा।

शाहजहां की उत्तर पश्चिमी सीमा के प्रति नीति का मुगल संसाधनों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। कंधार में तीन व्यर्थ के सैनिक अभियानों तथा बल्ख एवं बदखशां के अभियान में न

केवल धन की बर्बादी हुई अपितु यह मुगल सम्मान के लिए भी हानिकारक साबित हुए। बंदरगाह से होने वाले व्यापार में ईरान के साथ शत्रुता से रुकावट से बहुत प्रकार के नुकसान हुए। कंधार की विजय सरल करने के लिए शाहजहां ने ईरानी गवर्नर अली मर्दान को यह वायदा करके लालच दिया कि भविष्य में वह कंधार उसे दे देगा किंतु इस प्रस्ताव को उसने मानने से इंकार कर दिया। फिर भी अली मर्दान ने मुगलों का सामना करने के लिए सुरक्षात्मक उपाय किए किंतु उसके शत्रुओं ने शाह सफी को उसके विरुद्ध यह कहकर उकसाया कि अली मर्दान विद्रोह कर सकता है। अली मर्दान पर शाह ने अपने दरबार में उपस्थित होने के लिए दबाव डाला और उसके सभी तर्कों को मानने से इंकार किया तब अली मर्दान शाह के प्रति वफादारी दिखाने की अपेक्षा अपना जीवन सुरक्षित करने के लिए मुगलों के साथ मिल गया।

26 फरवरी, 1638 ई० को मुगल सेनाओं ने कंधार में प्रवेश किया और किलिज खां को इसका गवर्नर नियुक्त कर दिया गया। कंधार पर अधिकार करने के पश्चात् शाहजहां ने शाह सफी को सांत्वना देने का प्रयास किया और कंधार के सालाना राजस्व के बराबर धन की अदायगी करने की पेशकश की। दूसरे मोर्चे पर शाह सफी ने ऑटोमनों के साथ सितंबर 1639 ई० में शांति समझौता किया। इस समझौते से संतुष्ट हो शाह सफी ने मुगलों के साथ युद्ध करने की तैयारी प्रारंभ कर दी। लेकिन सैनिक अभियान प्रारंभ करने से पूर्व ही सन् 1642 ई० में शाह सफी की मृत्यु हो गई। शाह अब्बास द्वितीय को उसके उत्तराधिकारी के रूप में सिंहासन पर बैठाया गया और शाह अब्बास अभी 10 वर्ष का बालक मात्र था तथा शाहजहां ने तुरंत बधाई देने के लिए एक दूतमंडल को भेजा तथा अपनी दृष्टि तूरान पर लगा दी। दूसरी ओर ईरान कंधार पर अधिकार करने को उत्सुक था। ऑटोमनों के साथ हाल में की गई संधि तथा मुगल गवर्नर की निष्क्रियता के कारण कंधार में व्याप्त अराजकता ने कंधार पर ईरानियों की विजय योजना को और भी सुनिश्चित कर दिया। शाहजहां की सलाह के बावजूद भी मुगल कुलीन सर्दियों में ऊंची भूमि की ओर प्रस्थान करने पर आमादा थे और अधिक आयु वाला मुगल गवर्नर कंधार की रक्षा करने में असफल रहा। इस तरह शाह ने सरलता से दिसंबर, 1648 ई० में कंधार पर अधिकार कर लिया। मई 1649 ई० में औरंगजेब ने मुगल वजीर सादुल्लाह के साथ समीप के स्थानों पर अधिकार किया। ईरानी दूत शाहवर्दी जुलाई, 1649 ई० में मुगल दरबार में आया और उसने कंधार, जमींदावर तथा अन्य क्षेत्रों को विजित करने के कारणों को बताने का प्रस्ताव रखा और मुगल दरबार में उसकी व्याख्या को सुना गया। लेकिन शीघ्र ही कंधार पर अधिकार करने के लिए दाराशिकोह तथा औरंगजेब के नेतृत्व में दो सैनिक अभियानों को भेजा गया। दुर्गम भौगोलिक परिस्थितियों तथा आपूर्ति मार्ग में रुकावट पैदा करने के कारण उनका उस क्षेत्र में ठहरना मुश्किल हो गया। यदि बरनियर का विश्वास किया जाये तब यह माना जाता है कि मुगल सेना के ईरानी सैनिक भी अपने देश के सैनिकों के विरुद्ध पूर्ण उत्साह से नहीं लड़े। लुटेरे उजबेगों ने गजनी पर आक्रमण कर समस्या को और बढ़ाया। जबकि उनको भारी घूस दी गई थी। दारा एक सक्षम सेनानायक न था। इसलिए 1656 ई० में शाहजहां के द्वारा कंधार के लिए चतुर्थ सैनिक अभियान को त्याग दिया गया। एक समकालीन इतिहासकार ने ठीक ही कहा है कि कंधार अभियान का परिणाम तीस से चालीस हज़ार लोगों की मृत्यु एवं तीन करोड़ पांच लाख रुपयों के व्यय के रूप में हुआ।

कंधार के अतिरिक्त मुगलों एवं ईरानियों के बीच दक्खन भी संघर्ष का कारण बना रहा। दक्खन के शिया शासक वंश (गोलकुण्डा के कुतुबुल मुल्क तथा अहमदनगर के शिया निजाम) मुगल खतरे तथा अपनी "पारस्परिक सांप्रदायिक एकता" के कारण ईरानियों की तरफ हो गये। 1573 ई० से अकबर के द्वारा दक्खन के राज्यों के साथ कायम किये गये कूटनीतिक संबंधों तथा आगामी विजयों ने मुगल-दक्खन संबंधों की आधारशिला रखी। जहांगीर के अधीन अहमदनगर तथा बीजापुर पर किये गये आक्रमण का नेतृत्व शाहजहां एवं खान खानान ने किया तथा इस आक्रमण से बाध्य होकर दक्खनी राज्यों ने ईरानियों से मध्यस्थता का अनुरोध किया। कुली कुतुबशाह (1590-1611 ई०) तथा निजामशाह के मुख्य सेनापति मलिक अम्बर के दूतों ने शाह अब्बास से सहानुभूति के लिए अनुरोध किया। शाह अब्बास इस सीमा तक गया कि उसने दक्खनी राज्यों की सुरक्षा के बदले ईरान के कछ भाग दे देने तक का प्रस्ताव रखा। लेकिन 1617 ई० तक दक्खनी राज्यों एवं मुगलों

के मध्य संबंध तनावपूर्ण हो गये जो कि शाह के अप्रशंसनीय हस्तक्षेप के कारण नहीं अपितु मुगलों की सुलह एवं बल प्रयोग की नीति के कारण संभव हुआ।

7.5 दक्खनी राज्य एवं ईरानी-मुगल दुविधा

मुगल-ईरान संबंधों में एक दशक तक कूटनीतिक ठहराव रहने के पश्चात उस समय एक बार फिर तीव्रता आ गई जबकि दक्खन समस्या परिपक्व हुई। 1633 ई० में मुगलों द्वारा अहमदनगर पर अधिकार कर लिये जाने पर गोलकुण्डा हताश हो गया। शाहजहां ने 1636 ई० में कुतुब शाह तथा आदिल शाह को सुन्नी तरीके से **खुतबा** पढ़ने तथा ईरान के शाह का नाम **खुतबे** में सम्मिलित न करने के लिए दबाव डाला। गोलकुण्डा का शासक दबाव में आ गया। 1637 ई० में शाह सफी ने अहमद बेग कुर्ची को आदिल शाह के पास दूत के रूप में जाने के लिए नियुक्त किया। लगातार दूतों के आदान-प्रदान सहित कुतुब शाह ने अपने भतीजे के उच्च पदों (तब वह ईरानी दरबार से संबंधित था) का प्रयोग किया और यदि आवश्यक हो तो उसने सुरक्षित पलायन करने तथा ईरान में शरण लेने का प्रस्ताव रखा। अब्दुल्ला कुतुब शाह ने हकीम-उल-मुल्क को 1641 ई० में ईरान के शासक के दरबार में दूत के रूप में भेजा। मुगल अधिकारियों ने इसका विरोध किया तथा पत्रों के आदान-प्रदान पर रोक लगाने के लिए दबाव डाला। 1650 ई० में एक ईरानी दूत अंग्रेजी जहाज से आया। कंधार को विजित करने के कारण ईरान का शाह लाभदायक स्थिति में था। ईरान-दक्खन संपर्क में इस कारण भी वृद्धि हुई कि ईरान से विस्थापित लोग दक्खनी राज्यों के दरबार में उच्च पदों पर थे। इस प्रकार का उदाहरण हीरों का सौदागर मौहम्मद सईद मीर जुमला था जिसने अपनी मातृभूमि के साथ संबंधों तथा शाह अब्बास द्वितीय के साथ पत्र व्यवहार का हवाला दिया और इस प्रकार के कई अन्य लोग भी थे। अब्दुल्लाह कुतुब मीर जुमला से ईर्ष्या करने लगा तथा मीर जुमला मुगल दरबार में चला गया और अंततः वह मुगल सेवाओं में शामिल हो गया। औरंगजेब दक्खन का गवर्नर था और उसने 1656 ई० में गोलकुण्डा पर इस कारण से आक्रमण किया कि कुतुब शाह ने मीर जुमला के पुत्र को कैद कर रखा था। यद्यपि शाहजहां के आदेश पर आक्रमण को रोक दिया गया किंतु हैदराबाद एवं गोलकुण्डा के दूसरे भागों में भारी तबाही की गई। जबकि कर्नाटक पर भारी तबाही ज़ारी रही तथा औरंगजेब के भयभीत करने वाले दबाव के कारण कुतुबशाह ने ईरानी सहायता प्राप्त करने की कोशिश की।

ईरान का शाह पहले से ही राजकुमार मुराद बख्श तथा अन्य राजकुमारों एवं कुलीनों के साथ कूटनीतिक संबंध बनाये हुए था। शाहजहां के स्वास्थ्य की गिरती हालत तथा उत्तराधिकार के लिए संभावित युद्ध से उत्साहित होकर शाह ने मुराद के पास सेना भेज दी तथा मुराद ने 20 नवंबर 1656 ई० को स्वयं को स्वतंत्र शासक घोषित कर दिया और शाह अब्बास द्वितीय के पास दो दूतमंडलों को भेजा। शाह ने गोलकुण्डा तथा बीजापुर के शासकों से अपने मतभेदों को खत्म करने तथा मुगल साम्राज्य में व्याप्त अव्यवस्था एवं अराजकता से लाभ उठाने का आग्रह किया। किंतु औरंगजेब की विजय ने इन योजनाओं पर पानी फेर दिया। शाह अब दारा तक की सहायता करने में हिचकिचाने लगा।

औरंगजेब अपने अतीत के अनुभवों के कारण सावधान था और उसने अपनी उत्तर-पश्चिमी सीमाओं या कंधार पर शाह की लालसापूर्ण आक्रामक योजनाओं को कार्यान्वित नहीं होने दिया। फिर भी मुगलों एवं ईरानियों के बीच तनावपूर्ण संबंध जारी रहे।

बोध प्रश्न 3

1) शाह तहमस्प के साथ हुमायूं के संबंधों का संक्षिप्त विवरण दीजिए।

....

....

....

....

2) आप इस मत से कहां तक सहमत हैं कि ईरान के साथ मुगल संबंध कन्धार की समस्या के इर्द-गिर्द घूमते रहे?

....

....

....

....

....

....

3) जहांगीर के शासन काल में मुगल-ईरान संबंधों के मुख्य चरणों पर प्रकाश डालिये।

....

....

....

....

....

....

7.6 औरंगजेब तथा उत्तर-पश्चिमी सीमा

औरंगजेब की दक्खन राज्यों के प्रति शत्रुता में और वृद्धि उसके भाइयों तथा ईरान के शाह के बीच गुप्त वार्ताओं के कारण हुई। औरंगजेब ने ईरानी गवर्नर जुल्फीकार खां के माध्यम से शाह की स्वीकृति प्राप्त करने की इच्छा की और जुल्फीकार ने 1660 ई० में शाह की आज्ञा के साथ तुरंत एक दूत भेजा। शाह के पत्र में प्राचीन मित्रतापूर्ण संबंधों तथा ईरान के शासकों ने मुगलों की जो सहायता की थी उसका विवरण किया गया था और कंधार विजय के कारणों को भी बताया गया था। यद्यपि दूत का भव्य स्वागत किया गया था किंतु पत्र का उत्तर उत्साहवर्धक न था। मुलतान के गवर्नर तरबियत खां के अधीन एक वापसी दूत मंडल को मित्रतापूर्ण पत्र के साथ भेजा गया जिसमें कंधार विषय को समाप्त पाठ के रूप में माना गया था। लेकिन दोनों शासकों के संबंधों में और गिरावट आयी और दूत की अशिष्टता (जिसने शाह के साथ माजन्दरान जाने से इंकार कर दिया) ने मुगल सम्राट के साथ शक्ति परीक्षण के लिए शाह को एक अवसर प्रदान कर दिया। शाह ने औरंगजेब को जो पत्र भेजा उसमें उसे भाई का हत्यारा तथा उसकी अप्रभावी सरकार के कारण उत्पन्न हुई अव्यवस्था को उद्धृत किया गया था। तरबियत खां के पहुंचने से पूर्व ही शाह के सैनिकों के आक्रमण के लिए प्रस्थान की इच्छा की सूचना औरंगजेब के पास पहुंच चुकी थी। युद्ध के लिए तैयारी प्रारंभ हो गई तथा ईरान के साथ सभी प्रकार के व्यापार पर प्रतिबंध लगा दिए गए। सूरत के गवर्नर को आदेश भेजा गया कि ईरान को जाने वाले जहाजों को रोक लिया जाये। किंतु 1666 ई० में शाह की मृत्यु के समाचार के कारण खतरा टल गया। लेकिन तरबियत खाँ को शाह के अपमानपूर्ण विचार विनम्रता पूर्वक सुनने के कारण हटा दिया गया और उसकी बात को एक वर्ष तक न सुना गया।

अगला ईरानी शासक शाह सुलेमान (1666-1694 ई०) अपेक्षाकृत अयोग्य था तथा उसके धर्मपरायण पुत्र और उत्तराधिकारी सुल्तान हुसैन में कूटनीतिक एवं राजनैतिक मामलों की समझ कम थी। औरंगजेब कंधार अभियान में निहित समस्याओं से भली-भांति परिचित था। उसने 1688 ई० में हिरात के विद्रोही ईरानी गवर्नर की सहायता की। उसने राजकुमार मुअज्जम को कंधार जाने के लिए मनाया क्योंकि वह स्वयं जाट, सिक्खों तथा मराठों की समस्याओं एवं अपने पुत्र अकबर जिसने विद्रोह कर 1681 ई० में स्वयं को सम्राट घोषित कर दिया था— जैसे मामलों में पहले से ही उलझा हुआ था। यद्यपि

औरंगजेब को शाह से सहायता प्राप्त होने का पूरा विश्वास था लेकिन शाह ने ऐसा करने से इंकार कर दिया। तूरान के शासक अब्दुल अजीज तथा उसके भाई सुभान कुली के साथ कूटनीतिक संबंधों को मजबूत किया गया तथा सांप्रदायिक एकता पर बल दिया गया। 1685 ई० में बाला मुर्घब पर आक्रमण की योजना तथा ईरान विरोधी गठबंधन बनाने का प्रस्ताव एवं ईरान पर संयुक्त आक्रमण पर विचार-विमर्श हुआ। लगभग ठीक उसी समय उजबेग शासक अब्दुल अजीज ने शाह अब्बास द्वितीय से मित्रता करने की कोशिश की। लेकिन ईरान-उजबेग गठबंधन को कार्यरूप न दिया जा सका क्योंकि तूरान को उरगंज तथा ख्वारिज्म के द्वारा चुनौती दी गई थी तथा वह आंतरिक एवं बाह्य असंतोष से पीड़ित था और वहां अच्छे नेतृत्व का अभाव था। इस काल में सफवी साम्राज्य भी पतन की ओर अग्रसर था और निश्चित तौर पर विलीन होने वाला था। यह दक्खन राज्यों को समर्थन देने में असमर्थ था। 1687 ई० तक औरंगजेब ने शेष बचे दक्खन राज्यों बीजापुर एवं गोलकुण्डा को नष्ट कर उनके क्षेत्रों को अपने साम्राज्य में शामिल कर लिया। मध्य एशिया तथा ईरान की ओर से कोई खतरा विद्यमान न होने के कारण औरंगजेब की स्थिति और मजबूत हो गई।

इस प्रकार औरंगजेब ने मुगल साम्राज्य को "कूटनीतिक अलगाव की स्थिति" में छोड़ा और केवल 1698 ई० में बुखारा से एक महत्वहीन प्रतिनिधि मंडल आया। यद्यपि औरंगजेब ने कभी भी कंधार को वापस लेने का सपना नहीं देखा था फिर भी मुगल-ईरान संबंध क्रमशः बिगड़ते चले गये और ऑटोमन शासक से आये एक प्रतिनिधि मंडल का भी कोई उत्तर न दिया गया।

बोध प्रश्न 4

1) औरंगजेब की ईरान के प्रति क्या नीति थी?

....

....

....

....

....

7.7 सारांश

हमने इस इकाई में मध्य एशिया एवं ईरान के साथ मुगल संबंधों की विवेचना की है। विश्व स्थिति के साथ-साथ उन भौगोलिक कारकों पर प्रकाश डाला गया जिन्होंने मुगल विदेश नीति के स्वरूप को निर्धारित किया। कई मुगल शासकों के मध्य एशिया के उजबेगों तथा ईरानी शासकों के साथ संबंधों की अलग-अलग विवेचना की गई। अंततः इस इकाई में किये गये विश्लेषण का लक्ष्य उत्तर-पश्चिमी सीमा के भौगोलिक, राजनैतिक एवं व्यापारिक महत्व को स्पष्ट करना था और इस पर नियंत्रण करने के लिए मुगलों, उजबेगों एवं सफवियों के बीच यह संघर्ष का केन्द्र बिन्दु बनी रही।

7.8 शब्दावली

खाकान : खानों का सरदार

निशान : राजकुमार द्वारा दिया गया आज्ञा-पत्र

कज्जाक : मध्य एशिया की एक आदिवासी जाति

7.9 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) देखें भाग 7.1 आप अपने उत्तर में निम्नलिखित तथ्यों को शामिल करें: काबुल तथा कंधार को ऐसे दोहरे द्वारों के रूप में माना गया जो मध्य एशिया एवं ईरान की ओर जाते थे। अकबर काबुल एवं कंधार पर अधिकार बनाये रखकर उनको बाह्य आक्रमणों के विरुद्ध एक ढाल के रूप में प्रयोग करना चाहता था।

2) भाग 7.2 को देखें। आप अपने उत्तर में निम्नलिखित तथ्यों को शामिल करें: उजबेग तथा सफवी राज्यों की सीमायें आपस में मिलती थी। ईरान की व्यापारिक संपन्नता एवं उर्वरकता तथा वास्तव में उसके भौगोलिक राजनीतिक महत्व के कारण उसका उजबेगों से संघर्ष था। भारत तथा ईरान के बीच संघर्ष का मुख्य केन्द्र कंधार था क्योंकि यह भी भौगोलिक-राजनीतिक, वाणिज्यिकी एवं अन्य कारणों से महत्वपूर्ण था।

3) भाग 7.2 को देखें। आप अपने उत्तर में निम्नलिखित तथ्यों को शामिल करें: तैमूर तथा तुर्की राज्यों का दो राज्यों में विभाजन हो जाने के कारण मध्य तथा पश्चिम एशिया में उजबेग एवं सफवी दो राज्यों के रूप में अस्तित्व में आये। उन दोनों राज्यों में राजनीतिक एवं व्यापारिक लाभ के लिए इन क्षेत्रों पर अपनी-अपनी सर्वोच्चता कायम करने के लिए संघर्ष होता रहा।

बोध प्रश्न 2

1) उप-भाग 7.3.2 को देखें। आप अपने उत्तर में निम्नलिखित तथ्यों को शामिल करें: उजबेग-मुगल संबंधों के तृतीय चरण में उजबेगों ने मुगलों के प्रति सुलह-समझौते के दृष्टिकोण को अपनाया। इस समय के आस-पास मुगलों ने कंधार को विजित कर लिया था और वे उजबेगों का विरोध करने की नीति का अनुसरण कर रहे थे।

2) उपभाग 7.3.4 को देखें। आप अपने उत्तर में निम्नलिखित तथ्यों को शामिल करें: कंधार पर पुनः अधिकार करना, पूर्वजों की भूमि को पुनः विजित करना तथा दक्खन में अपने संपूर्ण नेतृत्व को स्थापित करना आदि।

बोध प्रश्न 3

1) भाग 7.4 को देखें। आप अपने उत्तर में निम्नलिखित तथ्यों को शामिल करें: हुमायूं का भारत से निष्कासन हो जाने पर उसने ईरान में शरण ली तथा शाह तहमस्प ने उसके प्रति सहानुभूति पूर्ण दृष्टिकोण अपनाया। यद्यपि कंधार पर नियंत्रण तथा सांप्रदायिक मतभेदों के कारण उनके संबंधों में तनाव बना रहा फिर भी उन्होंने कुल मिलाकर अपने संबंधों को मधुर बनाकर रखा।

2) भाग 7.4 तथा उपभाग 7.4.2 और 7.4.3 को देखें। आप अपने उत्तर में निम्नलिखित तथ्यों को शामिल करें: हुमायूं ने कंधार को विजित किया। हुमायूं की मृत्यु के बाद कंधार पुनः ईरानियों के हाथों में चला गया। अकबर ने इसे पुनः प्राप्त कर लिया। ईरानियों ने इस पर पुनः नियंत्रण स्थापित करने के प्रयास किये किंतु असफल रहे।

3) उपभाग 7.4.3 को देखें। आप अपने उत्तर में निम्नलिखित तथ्यों को शामिल करें: ईरानी राजदूतों को मुगल शासक के पास भेजा गया। कंधार पर पुनः ईरान का अधिकार हो गया। जहांगीर ने कूटनीतिक मौन को बनाये रखा।

बोध प्रश्न 4

1) भाग 7.4 को देखें। आप अपने उत्तर में निम्न तथ्यों को शामिल करें: औरंगजेब ने शाह की ओर से मित्रवत प्रतिनिधि मंडल का स्वागत किया और कंधार समस्या को मृतप्राय माना गया। आगे चलकर दोनों के बीच संबंध बिगड़ गये। संबंधों में अस्थिरता मुख्य विशेषता थी।

इस खंड के लिए कुछ उपयोगी पुस्तकें

1) रशब्रुक विलयम्स : **एन एम्पायर बिल्डर ऑफ दी सिक्सटींथ सेंचूरी**

2) राधेश्याम : **मुगल सम्राट बाबर**

3) वी.ए. स्मिथ : **महान् मुगल अकबर**

4) आर.पी. त्रिपाठी : **मुगल साम्राज्य का उत्थान एवं पतन**

5) एस.के. बनर्जी : **मुगल सम्राट हुमायूं**

6) बी.पी. सक्सेना : **मुगल सम्राट शाहजहां**

7) जे.एन. सरकार : **हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब्स् रेन्-4 जिल्दों में**

8) डॉ. गोपी नाथ शर्मा : **मेवाड़ मुगल संबंध**

9) ए.आर. खान : **चीफटेन्स इन दी मुगल एम्पायर ड्यूरिंग दी रेन् आफ अकबर**

10) के.आर. कानूनगो : **शेरशाह**